स्तोत्र-साहित्य का ऐतिहासिक विकास क्रम

आदिकाल से भक्तों ने देवार्चन को अपने जीवन का आदर्श बनाकर अपना प्रत्येक कार्य सम्पन्न किया है। जबतक ब्रह्म के आनंद रूप का उन्हें अनुभव नहीं हुआ तब तक उन्होंने अपने हृदय की भक्ति भावना में किसी प्रकार की कमी न होने दी। आनंद स्रोत ब्रह्म का अस्तित्व ही मानवीय जीवन की रसमयता और सफलता का आधार विन्दु है। जब उसको भूल कर 'अहं' अपनाया जाता है तभी कष्ट से सहन करने पड़ते हैं। वेदों में अनेक रूपों में उस परमब्रह्म के आराधन का संकेत किया गया है। उनकी प्रत्येक पंक्ति ब्रह्म की अलौकिकता की घोषणा करती है। बिना ईश्वर के संसार का कोई मूल्य नहीं है। उसकी कृपा के बिना भूतल का एक तृण भी गति नहीं कर सकता। ईश्वर के अस्तित्व का यथार्थ दिग्दर्शन वेदों के द्वारा स्थान स्थान पर कराया गया है। ऋग्वेद में अनेक देवताओं का स्तवन करके उसकी सत्ता का प्रदर्शन किया गया है।

यथा :

धृतो ह्वन सन्त्येया उपुर्ष्रु धी त्रिरः।
याभिः कण्वस्य सुनवो ह्वन्ते ऽ वंसे ।।५।। ३१।अ०६।स०४५।५

वेदों के विभाग : वेदों के प्रधानतः दो विभाग हैं-संहिता और ब्राह्मण ~~मन्जो~~ मंत्रों के समुदाय का नाम संहिता है। ब्राह्मण ग्रंथों में इन्हीं मंत्रों की विस्तृत व्याख्या है। संहितायें चार हैं।१। ऋक् संहिता।२। यजुः संहिता।३। साम संहिता।४। अथर्व संहिता। इन संहिताओं का संकलन वेदव्यास ने किया था। यज्ञ कार्य के लिए इन चार की उपस्थिति स्वयं सिद्ध है..होता, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा। 'होता' का शाब्दिक अर्थ है पुकारने वाला। 'होता' यज्ञावसर पर विशिष्ट देवता के प्रशंसात्मक मंत्रों का उच्चारण कर उस देवता का आवाहन करता है। अतः जिसमें इस प्रकार के मंत्रों का संकलन हुआ है उसे 'ऋक् संहिता' कहते हैं। 'अध्वर्यु' का काम यज्ञों का विधिवत संपादन है। उसके लिए आवश्यक मंत्रों का समुदाय 'यजुः संहिता' कहलाता है। 'उद्गाता' शब्द का तात्पर्य है उद्घोषणा करने वाला। यह स्वर का निर्देश कर उनमें रागात्मक प्रतिरूप उपस्थित करता है। अतः इस कार्य के लिए 'सामवेद संहिता' का संकलन किया गया है। ब्रह्मा को 'ऋत्विज' कहा जाता

है जिसका कार्य यज्ञ का निरीक्षण करना है ताकि अनुष्ठान में त्रुटि न हो ।
ब्रह्मा को समग्र वेदों का ज्ञाता होना चाहिए पर उसका विशिष्ट वेद 'अथर्व' है ।

ऋग्वेद संहिता:

इसमें विभिन्न देवताओं की स्तुतियां हैं । निरूक्तकार महर्षि यास्क ने स्थान की दृष्टि से उन्हें तीन भागों में विभक्त किया है ।१। पृथ्वी स्थान ।२। आन्तरिक्ष स्थान ।३। द्युस्थान ।

पृथ्वी पर रहने वाले देवताओं में अग्नि सबसे महत्वपूर्ण है । अत: ऋग्वेद में सबसे अधिक स्तुतियां इसी के विषय में हैं । आन्तरिक्ष में रहने वाले देवताओं में इन्द्र का स्थान तथा आकाश में रहने वाले देवताओं में सूर्य सविता या विष्णु आदि देवताओं का स्थान महत्वपूर्ण है । वरूण इन देवताओं में सबसे अधिक महत्वशाली है । वरूण , इन्द्र , सूर्य आदि देवता नित्य प्रति संसार के कल्याणार्थ प्रयत्नशील रहते हैं।उनकी कृपा के बिना शील नहीं । इन्द्र वृष्टि के देवता हैं । विष्णु उस सूर्य के प्रतिनिधि हैं जो सदैव क्रियाशील रहता है । वैदिक देवियों में 'उष:' की कल्पना कवित्वपूर्ण है । वैदिक ऋषियों ने अपनी रचनाओं में इन्हीं का गुणगान किया है । उन्होंने सर्व संसार एवं त्रिलोक में व्याप्त एक अपूर्व सत्ता का पता लगाकर उसकी स्तुति की थी । उसी का नाम आत्मा या ईश्वर है । समस्त देवता उसी सर्व व्यापी परमात्मा के भिन्न-भिन्न प्रतीक हैं ।[१२] ऋग्वेद की निम्न स्तुतियां इन्हीं देवताओं की हैं ।

अग्नि: पूर्वे भिऋषिभि रीड्यो नूत नैरूत ।
सदेवां एह वेक्षति ।।२।। ऋ० सं० अ०१ ।व० १।१
मित्र हुवे पूत दक्षं वरूणं च रिशादसम् ।
धियं घृताचीं साधन्ता ।।७।। अ० १। व० ४।६ ।
इन्द्रा याहि चित्र भानो सुताइमे त्वायव:
अण्वी भिस्तना पूतास० ।।४।। अ० ।१ सू० ३।२।

---

१. निरुक्त ७।४।८ महाभाग्यात् देवताया एक एव आत्मा बहुधा स्तूयते ।
एकस्यात्मनोऽन्ये देवा: प्रत्यंगानि भवन्ति ।।

असु मान्त्सु तत्रे चौदुमैन्दुं रामे रमस्वत: ।
तुवि धुम्नि यशोस्वत: ।।६।। अ० ३।सू० ६६८।
अग्ने वाजैस्य गोमित ईशान: सहसो महो। ।
अस्मै धेहि जातवेदो महि श्रव: ।।४।। अ० ५ ।व० ।२७।५

उपर्युक्त 'स्तोत्रों' में आत्मिक शान्ति एवं विश्व कल्याणकारी विभिन्न देवताओं का स्तवन किया गया है। सूर्य, मरूत्, इन्द्र, अग्नि आदि देवता सदैव ही हमारी रक्षा करते रहे हैं। पृथ्वी के आदिकाल से ही मानव चेतना अपने प्रति कल्याणकारी व्यक्तियों की प्रशंसक रही है। पृथ्वी का रूप ही अर्चन-सिद्धान्त पर आधारित है। सबसे मुख्य बात यह है कि जिन देवताओं के द्वारा विश्व का कल्याण होता है, मानव जीवन गौरववान बनता है, हम सुख शान्ति का अनुभव करते हैं, उनका अर्चन ~~मानवमात्र~~ ~~सैद्धान्तिक~~ ~~कर्त्तव्य~~ आवश्यक है। प्रो० मैकडौनल के अनुसार 'ऋग्वेद' का अधिकांश भाग स्तोत्रात्मक है। केवल दसवें मंडल में कुछ लौकिक कवितायें हैं। ऋग्वेद प्राचीन लोक प्रिय कविताओं का संकलन नहीं है वरन् याजकीय वर्ग द्वारा बड़ी प्रवीणता से रचित स्तोत्र समूह है।[1]

सामवेद संहिता

'गायन को साम कहते हैं। ये ऋचाओं के ऊपर आश्रित हैं। ऋचायें ही गाई जाती हैं। इसीलिए समस्त सामवेद में ऋचायें ही हैं। इनकी संख्या १५४६ है जिनमें केवल ७५ ऋचायें ही स्वतंत्र हैं जो ऋक् संहिता में उपलब्ध नहीं होती। इसीलिए सामवेद की स्वतंत्र ~~रूप~~ ~~से~~ ~~ऋक्~~ ~~संहिता~~ ~~में~~ सत्ता नहीं मानी जाती।'[1]
इस संहिता के भी दो भाग हैं ।१। पूर्वार्चिक ।२। उत्तरार्चिक/पूर्वार्चिक को छन्द:, छन्दसी अथवा छन्दसिका कहते हैं। विषयानुसार इस खन्ड की ऋचायें ४ भागों में विभक्त की गई हैं .. ।क। आग्नेय पर्व ।ख। ऐन्द्र ।ग। पवमान्

---

१. बल्देव उपाध्याय, संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० २२

।घ। आरण्यक पर्व । द्वितीय खन्ड उत्तरार्चिक के नाम से प्रख्यात है । इसमें विषयानुसार कई उपखन्ड हैं । जिसमें निम्नलिखित अनुष्ठानों का निर्देश किया गया है । ..।१। दशराज ।२। संवत्सर ।३। ऐकाह ।४। अहीन ।५। सत्र ।६। प्रायश्चित ।७। क्षुद्र । इस संहिता के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं ..

त्वं वरुण उतमित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मति र्मिवसिष्ठा:।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभि: सदान: ।।३।।[1]

शशमानस्य वानर: स्वदेस्य सत्य शवस: ।
विदा कामस्य वेनत: ।।२।।[2]

यादस्त्रा सिंधु मातरा मनोतरा रयीणाम् ।
धियादेवा वसुविदा ।।२।।[3]

उषो अद्येहगोमत्य श्वावति विभावरि ।
रेवदस्मे व्युच्छ सुन्टतावति ।।२।।[4]

सामवेद में केवल एक ही देवता की प्रशंसा नही की गई , वरन् विश्व को सुख देने वाले प्रत्येक देवता का स्तवन किया गया है । वरुण , इन्द्र , उषा , अग्नि , वायु आदि सभी का गुण-गान किया गया है । आनंदातिरेक में आकर हमारे वैदिक ऋषियों ने ~~अग्नि~~ पवमान , सोम , मित्र , अश्विनी कुमार , विष्णु आदि सभी की अर्चना की है । परन्तु यदि देखा जाय तो समस्त सामवेद 'सोम' की प्रशंसा से ओत-प्रोत है । भक्ति की पयास्विनी में आत्मानंद की प्राप्ति केवल मंत्रोच्चारण द्वारा ही की गई है । विश्व के प्रपंचों से परितृप्त आत्मा ने देवार्चन करके ही अपने को सुखी बनाने का प्रयत्न किया है । आदि काल से देवताओं की कल्याण (कामना) के लिए प्रार्थना होती रही है ।

---

१. सामवेद सं० पृ० ३२६ राम स्वरूप शर्मा
२. " " पृ० ४०२ " "
३. " " पृ० ४३५ " "
४. " " पृ० ४३६ " "

यजुर्वेद एवं अथर्व वेद संहितायें :

यजुर्वेद एवं अथर्व वेद केवल यज्ञ भागादि से ही सम्बंधित हैं। गद्य को 'यजु: ' कहते हैं। इस वेद में उन गद्य वाक्यों का समूह है जिनका उपयोग अध्वर्यु यज्ञ के अवसर पर किया करता है। अथर्व ऋषि के द्वारा दृष्ट होने के कारण चतुर्थ वेद 'अथर्व वेद' कहलाया। इसमें भी अधिक मंत्रों का चयन ऋग्वेद से ही हुआ है। 'स्तोत्रों ' की संख्या नाम मात्र की है।। जितने भी स्तुति मंत्र हैं वे सब ऋग्वेद में हैं। सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद आदि सभी ऋग्वेद पर आधारित हैं। प्रभु के आनंदी रूप का उल्लेख करते हुए अथर्व वेद का ऋषि कहता है : स्वर्यस्यच केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नम: ।[1] यजुर्वेद में प्रभु के निर्गुण और सगुण रूपों का वर्णन इस प्रकार है :

सपर्यगात् शुक्र मकायम व्रणम् स्नाविरं शुद्धम् पापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभू: स्वयं भूर्याथातथ्यतो ऽर्थान्व्यदधात शाश्वतीभ्यः समाभ्य: ॥[2]

प्रभु का नाम ओइम है। यजुर्वेद ४०।१७ में ओइम् एवं ब्रह्म 'शब्दों द्वारा उसी प्रभु के नाम का निर्देश किया गया है। 'ओइम् क्रतो स्मर ' यजुर्वेद ४०।१५ में जीव को उसी के नाम 'ओइम ' का स्मरण करने के लिए कहा गया है। जो उत्पादक है वह पालक है और वही संहारक है। प्रभु ने सृष्टि उत्पन्न की है, वही उसकी रक्षा कर रहा है और वही इसे ग्रहण करेगा। सृष्टि उद्भव, विभव और विलय का स्थान ईश्वर है। निम्नांकित मन्त्रों में इसी बात को स्पष्ट किया गया है :

'नवं विदाथ यमा जजान १ ।ऋग्वेद १०।८२।७ ।
द्यावा भूमी जनमन देव एक: ।।।यजुर्वेद १७।१६।
पूर्णात् पूर्ण मुदचति पूर्ण पूर्णा निसिच्यते ।। अथर्ववेद १०।८।३६

तैत्तरीय उपनिषद्, भृगुबल्ली, प्रथम अनुवाक् में भी स्पष्ट रूप से ईश्वर को जगत-रचना, रक्षा एवं संहार का केन्द्र माना गया है।

'यतोवा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति ।
यत्प्रयन्ति अभिसंविशन्ति । तद् विजिज्ञासस्व । तद् ब्रह्म ।

ऋग्वेद में ईश्वर की प्रार्थना तो की ही गई है उसके अत्यधिक महत्त्व एवं स्थायित्व

---

१. अथर्ववेद १०।८।१
२. यजुर्वेद ४०।८

को भी स्पष्ट किया गया है । ७।३२।१६ । पर कवि कहता है 'हे प्रभु हम तेरे ही हैं' तेरे होकर ही हम 'इष' तथा 'स्वः', लौकिक तथा पारलौकिक सुख प्राप्त करें ।[1] भक्त अपने अन्तस्तल की जितनी गहराई के साथ प्रार्थना करता है, उतनी ही शीघ्र वह सुनी जाती है । यजुर्वेद में कहा है :

'यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृष्णं बृहस्पति में तद्दधातु ।
शन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ।।[2]

अन्य उत्तरकालीन वैदिक ग्रंथ

वेदों के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रंथों में भी स्तुतियां की गई हैं । ऐतरेय ब्राह्मण के प्रारम्भ में ही निम्नांकित शब्द आये हैं :

'ओइम अग्निर्वै देवानाम् अवमः विष्णुः परमः तदन्तरेण सर्वा अन्या देवताः ।' शतपथ, आर्षेय, गोपथ, आदि ग्रंथों में ईश्वरीय महत्व का निर्देशन किया गया है । ऋषियों ने अपनी प्रतिभा एवं प्रज्ञात्मक शक्ति से जिस सत्य का प्रत्यक्ष दर्शन किया । उसी सत्य का उपनिषदों में प्रतिपादन हुआ है ।[3] बृहदारण्यक: ३ : ३२ में याज्ञवल्क्य कहते हैं :

'एषाऽस्य परमागतिः एषाऽस्य परमासंपत्, एषोऽस्य परमोलोकः, एषोऽस्य परमं आनंदः, एतस्यैवं आनंदस्य अन्यानि भूतानि मात्रा भुप जीवन्ति ।' ईश्वर संहिता, ~~स्मृति~~, हयशीर्ष संहिता, विष्णुतत्व संहिता, मार्कण्डेय संहिता, ब्रह्मसंहिता, परमेश्वर संहिता, पाराशर संहिता, पौष्कर संहिता, जयाख्य संहिता, अहिर्बुधन्य संहिता में ईश्वरीय महत्व की संज्ञा लिए हुए स्तोत्रों का विकास हुआ है ।

वैखानस, आगम एवं धर्म सूत्रों में भी स्तोत्र साहित्य बिखरा पड़ा है । आर्य ऋषियों के चिंतन और भावना का मुख्य लक्ष्य वह सूक्ष्माति सूक्ष्म अंतिम तत्व रहा है, जिसका नाम और रूप द्वारा इस जगत में व्याख्यान हुआ तथा जो अव्याकृत से व्याकृत, अनिरुक्त से निरुक्त बना ।[4] आगे चलकर विभिन्न

---

१. शिक्षेयमित् महयते दिवेदिवे राय आकुह विद विदे ।
नहित्वदन्यत् मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन ।।७।३२।१६

२. यजुर्वेद ३६२

३. भक्ति का विकास पृ० २२० डा० मुंशी राम शर्मा

४. अथ ब्रह्मैव परार्द्धि मगच्छत । तत परार्द्धे गत्वा ऐक्षत कथनुइमान् लोकान् प्रत्यवेषा मितितद् द्वाभ्यां मेव प्रत्य वेद् रूपेण चैव नाम्ना च ।।शतपथ
। ११.२.३.३ ।

सम्प्रदायों ने भी अपनी भक्ति भावनाओं में स्तोत्रों का एक विशाल भंडार उपस्थित किया है। रामानंद, वल्लभाचार्य, रामानुज एवं नानक आदि ने अपनी भक्ति में ब्रह्म का स्तवन किया है। निम्नलिखित में जानकी का स्तवन किया गया है :

य: पृथ्वी भर वारणाय दिवि जै: सं प्रार्थित: चिन्मय:
संजात: पृथ्वी तले रविकुले माया मनुष्यो व्यय:।
निश्चक्र हत राक्षस: पुनरगाद ब्रह्मत्व मार्य स्थिरां
कीर्ति पाप हरां विधाय जगतां जानकी रामं जे ।।

स्तोत्रों के आधार

प्रकृति की वे सभी जड़ चेतन वस्तुएं वैदिक कालीन स्तोत्रों की आधार रही हैं जिनमें किसी भी प्रकार की कल्याणकारी भावना निहित थी। आर्यों ने अपने रक्षकों का अर्चन एवं स्तवन करने का प्रयत्न किया है। उनके स्तवन के देवता, ऊषः, वरुण, मरुत, अनल, इन्द्र, विष्णु, यम कुबेर, प्रकृति, आकाश, क्षितिज, चंद्र, सूर्य, आदि रहे हैं। इन सबका स्तवन आर्यों ने समय समय पर आवश्यकता अथवा सहज प्रेरणा के वशीभूत होकर भक्ति-भावना के साथ किया है। उनके देवता अजर अमर अविनाशी के रूप में विश्व के रक्षक हैं। उनका स्तवन ही कामना की पूर्ति कर सकता है। यदि वे किसी प्रकार भी कुपित हो जाते हैं तो मानव का विनाश सम्भव है। आदि ब्रह्म के इसीलिए उन्होंने तीन रूप स्थिर किए १. ब्रह्मा २. विष्णु ३. रूद्र । ब्रह्मा निर्माता, विष्णु रक्षक एवं रूद्र को विनाशक कल्पित किया गया है। रूद्र विश्व-कल्याण-हेतु ही कालकूट विष-पान कर गए थे। ऊषा देवी के रूप में कल्पित करके आर्यों ने उसे विश्व का सबसे आवश्यक अंग कहा है। ऊषा देवी के रूप में कल्पित करके आर्यों ने उसे विश्व का सबसे आवश्यक अंग कहा है। ऊषा देवी के रूप में कल्पित करके आर्यों ने उसे विश्व का सबसे आवश्यक अंग कहा है। ऊषा के आगमन से ही प्रकृति में नवीनता आती है और सूर्य उसके सहयोग से विश्व के रचनात्मक कार्यों में सहयोग देता है। आर्यों के इस प्रकार के देवताओं के अतिरिक्त आगे और भी विकास हुआ तथा अनेक दैवी देवताओं

की कल्पना की गई ।

संस्कृत के महाकाव्यों एवं पुराणों के स्तोत्र-साहित्य का विकास

वाल्मीकि रामायण

संस्कृत साहित्य में `रामायण ` को आदि काव्य माना गया है । इसमें कवि ने राम के जीवन से सम्बंधित घटनाओं को अत्यंत ही काव्यात्मक शैली में उपस्थित किया है । रामायण स्तोत्रों के अनेक रूप हैं जिनमें निम्नलिखित तत्व हैं :

।१। राम के गुणों एवं माहात्म्य का वर्णन

।२। राम के भगवद् रूप की व्याख्या

।३। इष्टापूर्त सम्बंधी स्तोत्र

।४। नदियों का दैवी रूप में अधिष्ठान

।५। ब्रह्मा एवं रूद्र आदि की स्तुतियाँ

राम में ईश्वरत्व की प्रतिष्ठापना इसी काल से प्रारम्भ हुई । वैदिक आर्यों ने नदियों का गुण-गान उपकृत के रूप में किया था परन्तु वाल्मीकि रामायण में उन्हें दैवी रूप प्रदान किया गया और इस प्रकार उनका और भी महत्वपूर्ण रूप सामने आया । रामायण में राम, विष्णु, शंकर , ब्रह्मा , गंगा एवं जमुना की स्तुतियाँ हैं । बालकान्ड में देवताओं द्वारा ब्रह्म एवं विष्णु की स्तुतियाँ की गई हैं । भगीरथ ने भी इष्ट सिद्धि के लिए ब्रह्मा जी से प्रार्थना की है ।[1] अयोध्या कान्ड में सीता जी ने गंगा के माहात्म्य का वर्णन किया है ।[2] उनकी यमुनास्तुति में पार होने की कामना है ।[3] आरण्य में शवरी ने भगवान् राम का गुण गान किया है । उसका आत्म निवेदन अत्यंत ही भक्ति पूर्ण है ।[4] सुन्दर कान्ड के अनेक श्लोकों में राम के ईश्वरत्व का वर्णन है और

---

१. बालकान्ड सर्ग १५ श्लोक ६: ११
बालकान्ड सर्ग ४५ श्लोक २१ १८:२०

२. अयोध्या कान्ड सर्ग ५२ श्लोक ८५ : ९२

३. अयोध्याकान्ड सर्ग ५५ श्लोक ।१६:२०।

४. आरण्यकान्ड सर्ग ७४ श्लोक ~~१८:१८~~ २७
सर्ग ७४ श्लोक ११:१८

५. सुन्दरकान्ड सर्ग ३४ श्लोक २८:३२
सर्ग ३५ श्लोक ८:२०

उनके पराक्रम, यश एवं व्यक्तित्व को महत्व देकर उनमें भगवत्व का उपक्रम किया है।[1] युद्धकाण्ड में अगस्त्य द्वारा भगवान् राम को रावण-वध के लिए 'आदित्य हृदय' नामक स्तोत्र का स्तवन करने का परामर्श दिया गया है। सूर्य के द्वारा ही संसार का प्रत्येक कार्य सम्पन्न होता है और उसका गुण गान सब प्रकार की सफलता प्रदान करता है। उसी में ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश आदि का तेज विद्यमान है। उसकी शक्ति अतुल्य है और प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्य में उपस्थित होने वाले विघ्नों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।[2]

---

१. सुन्दरकाण्ड सर्ग ३४ श्लोक २८:३२
सर्ग ३५ श्लोक ८:२०

२. रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुर नमस्कृतम्। पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्।
सर्व देवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः। एष देवासुर गणाँल्लोकान् पाति गभस्तिभिः

३ एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः। महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपां पतिः ॥८॥

पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः। वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥९॥

आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्। सुवर्ण सदृशो भानु हिरण्यरेता दिवाकरः ॥१०॥

हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्त सप्तिर्मरीचिमान्। तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्ड कोऽशुमान् ॥११॥

हिरण्य गर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः। अग्नि गर्भोऽदितेः पुत्रः शंख शिशिर नाशनः ॥१२॥

व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुः सामपारगः। घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथी प्लवंगमः ॥१३॥

आतपी मण्डली मृत्युः पिंगलः सर्वतापनः। कवि विश्वो महातेजा रक्तः सर्व भवोद्भवः ॥१४॥

नक्षत्र ग्रहतारा णामधिपो विश्व भावनः। तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तु ते॥१५॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः। ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः॥१६॥

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः। नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः॥१७॥

नम उग्राय वीराय सारंगाय नमो नमः। नमः पद्म प्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥१८॥

ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्य वर्चसे। भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥१९॥

तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने। कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः।२०

तप्त चामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे। नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोक साक्षिणे ॥२१॥

युद्धकाण्ड सर्ग १०५ श्लोक ६,२१

इस प्रकार रामायण के माध्यम से राम एवं अन्य देवी देवताओं का देवत्व हमें प्राप्त हुआ और यह परम्परा क्रमिक रूप में महाभारत में भी विकसित होती चली गई।

<u>महाभारत</u>

रामायण की भांति महाभारत भी अत्यंत ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। देवत्व का जो रूप रामायण में उपस्थित किया गया था उसका प्रौढ रूप हमें महाभारत में म प्राप्त होता है। इसमें भी रामायण की ही भांति स्तोत्र-साहित्य के विकास के सब तत्व प्राप्त होते हैं परन्तु भक्ति-भावना का विस्तार इसमें रामायण से अधिक हुआ है। इसमें भगवान् श्रीकृष्ण को सोलह कला का अवतार मानकर उन्हें जारक्क की संज्ञा प्रदान की गई है। वे भक्तों की रक्षा के लिए ही जन्म लेते हैं। 'विष्णु सहस्त्र नाम्', अनुगीता, भीष्मस्तवराज, एवं गजेन्द्र मोक्ष ऐसे आध्यात्मिक ग्रंथ इसी से उद्धृत किये गये हैं। इन्हीं गुणों के कारण महाभारत को पंचम वेद कहा गया है। महाभारत में सर्वत्र भगवान् का ही गायन किया गया है।[1] उनके कल्याणकारी रूप से प्रत्येक के दुःखों का विनाश होता है। द्रौपदी अपनी लज्जा-रक्षण के हेतु उनकी प्रार्थना करती है।[2] कृष्ण की प्रशंसा के भी अनेक स्थल हैं। मार्कण्डेय द्वारा भगवान् बालमुकुन्द का गुण कथन अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।[3] उन्होंने उन्हें सम्पूर्ण प्राणियों के माता-पिता की संज्ञा दी है।[4] कृष्ण के द्वारा चक्र सुदर्शन उठाने पर भीष्म का स्तवन अत्यंत ही भक्ति पूर्ण हुआ है। यदि उन्हें मृत्यु भी प्राप्त हो गई तो जीवन सफल हो जायगा।[5] जब भगवान् श्रीकृष्ण और युद्धिष्ठिर शर शय्या पर

---

१. वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ।
आदौचान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ।। महा० स्वर्गा० ६।६३

२. कृष्णं च विष्णुं चहरिं नरं च त्राणाय विक्रोशति या ज्ञसेनी।
ततस्तु धर्मोन्तरियो महात्मा समावृणो दूवै विविधैः सुवस्त्रैः।

(पादटि० ३, ४, ५ के लिए कृ० अगले पृष्ठ में देखिए) कृ० प० उ०

Smt. HANSA MEHTA LIBRARY
THE M. S. UNIVERSITY OF BARODA

पड़े हुए भीष्म जी के पास जाते हैं, उस समय वे भगवान् की ओर देखकर स्तुति करने लगते हैं और वे श्री कृष्ण से उत्तम गति की कामना करते हैं।

---

३. यः सदेवोमया दृष्टः पुरापद्मायतेक्षणः । समा पर्व
स एष पुरुषव्याघ्र सम्बंधी ते जनार्दनः ।। वन पर्व

४. स एष कृष्णो वार्ष्णेयः पुराण पुरूषो विभुः ।
ए ष धाता विधाता च संहर्ता चैव शाश्वतः ।
सर्वे षा मेव भूतानां पिता माता च माधवः ।।
गच्छ ध्वमेनं शरणं शरण्यं कौरव र्षभा: ।। वन पर्व

५. एह्येहि देवेश जगन्निवास
नमोऽस्तु तेशार्ङ्ग गदा सि पाणे ।
प्रसह्य मां पातय लोकनाथ
रथोत्तमाद् भूतशरण्य संख्ये ।।
त्वया हतस्येह ममाद्य कृष्ण
श्रेयः परस्मिन्निह चैव लोके ।
सम्भावितो ऽस्म्यन्धक वृष्णि नाथ
लोके स्त्रि भिश्च प्रथित प्रभाव ।। भीष्म पर्व

६. नमस्ते भगवन् कृष्ण लोकानां प्रभावाप्यय ।
योगीश्वर नमस्ते ऽस्तु त्वंहि सर्व परायणः ।।
दिवंते शिरसा व्याप्तं पद्भ्यां देवी वसुन्धरा ।
दिशो भुजे रविश्चक्षुर्वीर्ये शक्रः प्रतिष्ठितः ।।
त्वत्प्रपन्नाय भक्ताय गतिमिष्टां जिगीषवे ।
यच्छ्रेयः पुण्डरीकाक्ष त्वंन्यस्व सुरोत्तम ।। शान्ति पर्व

महाभारत में श्रीकृष्ण के अतिरिक्त धर्मराज , इन्द्र , श्रीमरुत , शिव , बद्रीनाथ , केदारनाथ , गंगा, अश्विनी कुमार आदि के भी स्तोत्र मिलते हैं । कुन्ती द्वारा इन्द्र और मरुत का आवाहन किया गया था और उन्हीं के वरदान स्वरूप अर्जुन और भीम का जन्म हुआ था इसीलिए भीम को पवन-पुत्र भी कहा जाता है । माद्रीन ने अश्विनी कुमारों का आवाहन कर नकुल और शहदेव की प्राप्ति की थी ।

रामायण काल के पश्चात् महाभारत में भी सूर्य की स्तुति क्रमश: चलती रही । रामायण का 'आदित्य हृदय स्तोत्र 'अत्यंत ही प्रसिद्ध है । इसी प्रकार कुन्ती द्वारा अपने कौमार्य काल में सूर्य का आवाहन और उसके फलस्वरूप कर्ण की प्राप्ति इस बात को सिद्ध करती है कि महाभारत काल में भी सूर्य सम्बंधी स्तोत्र बराबर लिखे जाते रहे हैं और उनका फल जन साधारण को श्रद्धानुसार प्राप्त होता रहा है ।

इस प्रकार महाभारत में प्रमुख रूप में श्रीकृष्ण प्राप्ति के विभिन्न साधनों एवं आचरणों की व्याख्या की गई है । जिन धर्मों के आचरण से भगवान् में प्रेम हो , उनका सदा पालन करते रहना चाहिए । यद्यपि इसका उद्देश्य यौद्धिक तत्परता और कर्म-महिमा का गान ही कहा जा सकता है , परन्तु मोक्ष धर्म और नारायण माहात्म्य के वर्णन में ही इसका अवसान है ।

पुराण

संस्कृत साहित्य में पुराणों का विशेष महत्व है । भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति को साधारण जनता में प्रचारित करने का श्रेय इन्हीं पुराणों को है । 'श्रीमद् भागवत ' इन सबमें सर्व प्रमुख ग्रंथ है । इसमें एक ओर यदि कृष्णभक्ति की अभिव्यक्ति की गई है तो दूसरी ओर जीवन की सात्विकता का भी स्मरण कराया गया है । धार्मिक दृष्टि से पुराण वेद विहित धर्म का सरल सुबोध भाषा में वर्णन करता है । इसका प्रत्येक स्कंध स्तोत्रों से परिपूर्ण है ।[१] कुन्ती द्वारा भी कृष्ण का गुण कथन किया गया है ।[२] गजेन्द्र ने भगवान् से मुक्ति की प्रार्थना की है ।[३]

---

१. श्रीमद्भागवत् श्लोक १,३ पृ० १
२. वही " १६,२२ पृ० ६२
३. वही " २, ३ पृ० ३६०

प्रजापति द्वारा शंकर की स्तुति की गई है । ४. राक्षस होने पर बलिवामन भगवान का स्तु स्वागत् करता हुआ उनके गुणों का गान करता है । ५. इसी प्रकार कल्कि पुराण में भगवान् कल्कि द्वारा शिव की स्तुति की गई है और उन्हें विघ्ननाशक एवं सर्वज्ञ कहा गया है । ६. विष्णु पुराण में पराशर ने भगवान् विष्णु के गुणों का गान करते हुए उनके परमात्म स्वरूप का यथार्थ चित्रण किया है । अव्यक्त होते हुए भी वे शत्रु का विनाश करने वाले हैं । उनकी सत्ता अपरिमेय है और वे सब प्रकार से मुक्ति देने वाले हैं । ७. वामन पुराण में ब्रह्मा जी ने भी विष्णु के चतुर्भुज रूप की स्तुति करके कल्याण की कामना की है । ८.

स्कन्द पुराण में ब्रह्मा जी ने विष्णु की प्रार्थना अनेक स्थलों पर की है । `वे भक्तों ` के प्रिय और दैत्यों का संहार करने वाले हैं । उनके द्वारा पापियों के पाप नष्ट हो जाते है और दुष्ट जन अपनी दुष्टता छोड़ देते हैं । इसलिए गदा पद्मधारी पुरूषोत्तम की मैं वंदना करता हूँ । जैसा लिखा है :

नमो नमस्तेऽ नर नायकाय नमो नमो दैत्यविमर्दनाय ।।७५।।
नमो नमो भक्त जन प्रियाय नमो नमः पाप विदारणाय ।।
नमो नमो दुर्जन नाशकाय नमोऽ स्तु तस्मै जगदीश्वराय ।।७६।।
नमो नमः कारण वामनाय नारायण यमित विक्रमाय ।
श्री शांर्ङ्ग चक्रासि गदाधराय नमोऽस्तु तस्यै पुरुषोत्तमाय ।।७७।। ९

---

४. श्रीमद् भागवत् श्लोक २१.२२ पृ० ३६६
५. वही " २६.३० पृ०४२१
६. कल्किकल्कि पुराण " १२ .. २०
७. अविकाराय शुद्धायानित्याय परमात्मने । सदैक रूप रूपाय विष्णवे सर्व जिष्णवे ।
नमो हिरण्य गर्भाय हरये शंकरायच । वासुदेवायताराय सर्ग स्थित्यंत कारिणे ।।२।।
एकाने स्वरूपाय स्थूल सूक्ष्मात्मने नमः । अव्यक्त व्यक्त रूपाय विष्णवे मुक्ति हेतवे ।
सर्ग स्थिति विनाशानां जग तोयो जगन्मयः। मूल भूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ।४।
विष्णु पुराण द्वि० अ० श्लोक ।१.४।
८. शंख चक्र गदापाणिः श्री वत्सांकश्चतुर्भुजः। प्रांजलिस्तं प्रणम्याह प्रसीदेत्य स्तुवं सदा ।।
९. स्कन्द पुराण श्लोक ७५..७७ वामन पुराण श्लोक ६०

इसी प्रकार अन्य स्थलों पर भी स्तोत्र प्राप्त होते हैं[१]। आदित्य पुराण में देव शर्मा द्वारा भगवान् की स्तुति की गई है।

इस प्रकार पुराण भगवद् महिमा के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं। व्यास ने साधारण जनता को भक्ति समन्वित करने के हेतु ही इनका रचना विधान किया था। ब्रह्म का अस्तित्व और उसके महत्व की व्याख्या ही पुराणों का उद्देश्य कहा जा सकता है। इनके द्वारा रामायण एवं महाभारत के देवत्व को और भी विस्तृत रूप देकर जन साधारण के सम्मुख उपस्थित करने का प्रयत्न किया गया है।

संस्कृत के कवियों एवं नाटककारों में कालिदास का भी एक विशेष स्थान है। उनके 'कुमार सम्भव' एवं 'रघुवंशम्' के अनेक स्थल स्तोत्रात्मक हैं। 'कुमार सम्भव ~~स्वन्~~ में ब्रह्मा की और रघुवंश में विष्णु की दो उत्तम प्रार्थनाएं की गई हैं जिनमें तत् देवता के तात्कालिक परमोत्कर्षवाद की सच्ची भावना से दोनों को क्रम से देवाधिदेव विश्वाधिक और सब प्रकार से परे बतलाया गया है।'[२] इनके अतिरिक्त शिशुपाल वध, किरातार्जुनीय, उत्तररामचरित, आदि में भी अनेक स्तोत्रात्मक स्थल हैं।

<u>संस्कृत के अन्य स्तोत्र सम्बंधी ग्रंथ :</u>

1. शिव महिम्नः स्तोत्र

इस ग्रंथ के रचयिता कोई पुष्पदन्त आचार्य हैं। परन्तु उनके व्यक्तित्व का पूर्ण परिचय नहीं प्राप्त होता। यह स्तोत्र, सुन्दर 'शिखरणी' वृत्तों में लिखा गया है और सचमुच ही अत्यंत महत्वपूर्ण है। साहित्यिक माधुर्य की इसमें पूर्ण अभिव्यञ्जना है। शंकर की स्तुति में स्तोत्रकार कहता है

असित गिरि समस्यात् कज्जलं सिंधु पात्रे।
सुरतरु वर शाखा लेखनी पत्र मुर्वी ।।

---

१. आदित्य पुराण श्लोक ४५

२. डा० कीथ (अनु० डा० मंगल देव शास्त्री) संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० १२१

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वं कालम् ।
तदपि तव गुणा नामीश पारं नयाति ॥

अर्थात् नीलगिरि के समान यदि कालीस्याही हो , समुद्र मसि पात्र हो , कल्पवृक्ष की डाल लेखनी हो , विशाल पृथ्वी कागज हो , इन उपकरणों से युक्त होकर यदि भगवती सरस्वती सदैव आपके गुणों को लिखे तो भी हे भगवान् ! वह आपके गुणों के अन्त तक नहीं पहुँच सकती ॥[१.]

२ सूर्य शतक

मयूरभट्ट द्वारा 'सूर्य शतक' में भगवान् भास्कर की स्तुति की गई है । कहा जाता है कि उन्हें कुष्ठ रोग हो गया था , जिसके निवारणार्थ ही उन्होंने सूर्य की स्तुति की थी । अनुप्रासों के द्वारा स्तोत्रकार ने इसे और भी माधुर्य प्रदान किया है ।

३. चन्डी शतक

इसमें बाण भट्ट ने भगवती दुर्गा की अत्यंत ही भक्ति पूर्ण स्तुति की है जिसमें उनके अन्त:करण की तन्मयता का अनुभव किया जा सकता है :

विद्राणे रूद्र वृन्दे सवितरि तरले वजिध्व स्तवज्रे
जाताशंके विरमति मरूतित्यक्त वैरे कुबेरे ।
वैकुण्ठे कुण्ठि तास्त्रे महिष यति रुषं पौरू षोपघ्न विघ्नं
निर्विघ्नं निघ्नतीव: शमय तुदिरितं भूरिभावा भवानी ॥ [२.]

एक स्थान पर शिव की भी स्तुति की गई है :

नमस्तुंग शिर श्चुम्बि चन्द्र चामर चारवे ।
त्रैलोक्य नगरा रम्भ मूल स्तम्भाय शम्भवे ॥

अर्थात् अपने ऊँचे सिर का स्पर्श करने वाले चन्द्र रूपी चामर से सुन्दर तथा त्रैलोक्य रूपी नगर के निर्माण के मूल स्तंभ रूप शम्भु को नमस्कार है ।[३.]

---

१. डा० बल्देव उपाध्याय .. संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० २६५
२. वही पृ० २६७
३. डा० कीथ संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० २५३

४. शंकराचार्य के स्तोत्र

~~कल्ल~~ आचार्य शंकर की 'कीर्ति कौमुदी' आज भी उसी प्रशान्त रूप से समस्त जगत को प्रद्योतितकर रही है। आचार्य शंकर ने दार्शनिक जगत में अद्वैत तत्व की प्रतिष्ठा की थी। परमार्थ दृष्टि से उन्होंने अद्वैत तथा मायावाद दोनों की प्रतिष्ठापना की है परन्तु व्यवहारिक रूप में नाना देवताओं की उपासना को उन्होंने महत्व दिया है। उनके विचार से सगुण ब्रह्म की उपासना हमें निर्गुण तक ले जाती है। इसीलिए शंकर ने उपास्य ब्रह्म के प्रतिनिधि विष्णु, २. शिव, ३. गणपति, ४. शक्ति, ५. हनुमान ६. नदीतीर्थ और ७. की परम रमणीय स्तुतियाँ लिखी हैं।

उनके स्तोत्र हमारे स्तोत्र साहित्य में शृंगार रूप में हैं। उनमें संगीत का इतना माधुर्य है कि पाठक उन्हें सुनकर मंत्र मुग्ध हो जाते हैं। 'सौंदर्य लहरी' में भगवती त्रिपुर सुन्दरी के दिव्य सौंदर्य की छटा जितनी प्रस्फुटित हुई है उतनी सम्भवत: अन्यत्र नहीं। इस 'लहरी' में भगवती का नखशिख वर्णन बड़ा ही सुन्दर हुआ है। साहित्य सौंदर्य तथा तान्त्रिक गूढ़ता दोनों ही रूपों में यह स्तोत्र अद्वितीय है। भगवती कामाक्षी की सिंदूर रेखा तथा सीमन्त का निम्नलिखित वर्णन साहित्य संसार के लिए नवीन वस्तु है। कल्पना की कमनीयता का एक अभिराम उदाहरण है :

> तनोतु क्षेमं नस्तव वदन सौंदर्य लहरी परीवाह: स्तोत्र: सरणिरिवं सीमन्त सरणी।
>
> वहन्ती सिंदूर प्रबल कवरी भार तिमिर दिषां ~~वृन्दैं~~ वन्दीकृतार्भिबनवीन किरणम् ॥१॥

आचार्य शंकर ने गंगा, यमुना, शंकर, शक्ति, विष्णु, राम आदि का भी महत्व गाया है। वंदन करके ही तो हम अनुराग ग्रहण कर सकते हैं। अत: आचार्य शंकर के स्तोत्र अपार संख्या में विभिन्न देवी देवताओं के लिए लिखे गये हैं। देखिए किस प्रकार निम्न स्तोत्र में कल्याण कारिणी जननी गंगा का आनंदकारी रूप स्पष्ट किया गया है। ~~देखिए किस प्रकार निम्न स्तोत्र में~~

---

१. डा० बल्देव पाध्याय पृ० २६८ २. डा० गोपीनाथ कविराज शिव स्तोत्र ।१२। भारतीय संस्कृति और साधना पृ० १०४

३. डा० गोपीनाथ कविराज शिव स्तोत्र ।१२। भारतीय संस्कृति और साधना ~~मृ~~ पृ० १०३

भगवान् शंकर के मस्तक पर विराजने वाली मल का हरण करने वाली एवं सब प्रकार का सुख देने वाली गंगा विश्व वंदनीय है। वे कहते हैं :

देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे, त्रिभुवन तारिणि तरलतरंगे।
शंकर मौलि विहारिणि विमले मम मतिरास्तां तनपद कमले ।।१।।
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जल महिमा निगमे ख्यातः।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपा मयि माम ज्ञानम् ।।२।। २.

उन्होंने गंगा को अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनकी कृपा से विश्व का ~~कल्याण~~ कल्याण होता है :

हरिपद पाद्य तरंगिणी गंगे हिमविधु मुक्ता धवलतरंगे।
दूरी कुरु मम दुष्कृति भारं कुरु कृपया भव सागर पारं ।। ३.

उपर्युक्त श्लोकों में भक्ति की एक मनोहर धारा प्रवाहित हुई है।

५. 'मुकुन्द माला' एवं 'आलवन्दार स्तोत्र'

श्री कुलशेखर का 'मुकुन्द माला' एवं यामुनाचार्य का 'आलवन्दार स्तोत्र' वैष्णव मत के स्तोत्रों में श्रेष्ठ स्थान रखते हैं। कवि अपनी दीन हीन अवस्था का वर्णन करके आत्म विस्मरण साकार लेता है। कभी वह भगवान् के विराट रूप से प्रभावित दर्शन से चमत्कृत हो जाता है। यद्यपि स्तोत्रकार ने केवल ३४ श्लोक ही लिखे हैं परन्तु उनका माधुर्य एवं दार्शनिक रूप अत्यंत ही उच्चकोटि का है।

पिछले पृष्ठ का :

४. डा० गोपीनाथ का विराज ~~शिव~~ गणेश स्तोत्र ।४। भारती संस्कृति और साधना पृ० १०४
५. वही शक्ति स्तोत्र ।२७। भा० संस्कृति और साधना पृ०१०३
६. वही साधारण स्तोत्र वही पृ० १०५
७. वही नदी तीर्थादि विधान स्तोत्र ।६। वही पृ० १०४

......

।१। पृ० २६६ डा० बल्देव उपाध्याय
।२। श्री गंगास्तोत्रम् पृ० २६७ स्तोत्र रत्नावली गीता प्रेस
।३। " पृ० २६८ " "

क यमुनाचार्य का `आलवंदार स्तोत्र` प्रसिद्ध है। इनका तामिल नाम भी यही था और इसीलिए इनके स्तोत्र का नाम `आल वंदार` स्तोत्र पड़ा है। इसमें आन्तरिक सौंदर्य इतना अधिक है कि भक्त जन इसे `स्तोत्र रत्न` के नाम की संज्ञा देते हैं। स्तोत्रकार ने अपना भक्ति से परिपूर्ण हृदय भगवान् के सम्मुख इतनी दीनता भरे शब्दों में उपस्थित किया है कि पाठकों का चित्त उसे पढ़ कर गद् गद् हो जाता है। प्रपत्ति का भाव इसमें अत्यंत ही श्रेष्ठता से वर्णित हुआ है :

तवा मृतस्यन्दिनि पादपंक जे नि वे। शितात्मा कथ मन्य दिच्छति ।।[1]
स्थिते स्थिते ऽ रविन्दे मकरन्द निर्भरे मधु व्रतो नेक्षु रसं समीक्षते ।।

अर्थात् `हे भगवान्` मेरा चित्त आपके अमृत रस चुराने वाले पाद पद्मों में रम गया है, भला अब वह किसी दूसरी वस्तु को क्योंकर चाहेगा ? पुष्प रस से भरे हुए कमल के विद्यमान रहने पर क्या भ्रमर ईख के रस को कभी देखता है ? उसे चखने की उसे किंचित अभिलाषा होती है ? नहीं। वह तो सदैव तुम्हारे ही चरणों में रत रहना चाहता है।

६. लीला शुक

इनका `कृष्णकर्णामृत` प्रसिद्ध है। यह स्तोत्र वास्तव में भक्तों को मधुर रस प्रदान करता है। भाषा भावानुकूल प्रयुक्त हुई है।

मुग्ध स्निग्ध मधुर मुरली माधुरी धीरनादैः
कारं कारं कारण विवशं गोकुल व्याकुलत्वम् ।।
श्यामं कामं युव जन मनोमोहनं मोहनांग
चित्ते नित्यं निव सतु महो वल्लवीवल्ल मनः ।।[2]

वैकंटा ध्वरि ..

।१। डा० बल्देव उपाध्याय — संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० २७०

।२। डा० बल्देव उपाध्याय — संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० २७१

इनका `लक्ष्मी सहस्त्र ` स्तोत्र प्रसिद्ध है । सैकड़ों श्लोकों में तो लक्ष्मी के नख-शिख का वर्णन है । महान् भक्त एवं कवि होने के नाते कभी तो वे भगवती से दया की भीख माँगते है , तो कभी वे उनकी विरुदावली गाने में वयस्त हो जाते हैं । उन्होंने जो कुछ लिखा है उसमें अलौकिक प्रतिभा, नित नूतन उत्प्रेक्षा, कमनीय रचना-चातुरी का परिचय दिया है । भगवती लक्ष्मी का यह कटि-वर्णन अद्वितीय है :

परमादिषु मातरा दिमें यदि मं को ष्कृता ह्मध्यम् ।
अमर: किल पामरस्तत: स वाख स्वय मेव मध्यम: ।।[1]

`हे माता आप जगद् जननी हैं । आपकी कटि इस सृष्टि के आदि में विद्यमान् व्यक्तियों में स्थिर है ।

उत्पलदेव की `शिव स्तोत्रावली ` और जगद्धर्मट्ट की `स्तुति कुसुमाञ्जलि ` अत्यंत प्रसिद्ध हैं । काश्मीरी शैवों में इन स्तोत्रों को वही स्थान प्राप्त है , जो वैष्णवों में पूर्वोक्त स्तोत्रों को प्राप्त है । `उत्पलदेव ` की शिव स्तोत्रावली में २१ विभिन्न स्तोत्रों का संग्रह है । इनमें भगवान् शंकर के अनंत गुणों का महत्व ही गाया गया है । और उनके कमनीय रूप की झाँकी प्रस्तुत की गई है । वह तो कहते हैं :

`कन्ठ कोण विनि विष्ट मीशते काल कूट मपि मे महामृतम् ।
अप्यु पात्तममृतं भवद्वयुर्यद वृत्ति यदि मे नरोचते ।।[2]

अर्थात् हे भगवान् । आपके कन्ठ के कोने में रखा गया काल कूट भी मेरे लिए महान् अमृत के समान पोषक है । परंतु यदि आपके शरीर से पृथक होकर रहने वाला अमृत भी हो तो वह मुझे नहीं रुचता ।

जगद्धर भट्ट की `स्तुति कुसुमाञ्जलि ` जिसमें ३८ स्तोत्र एवं १४०० विभिन्न श्लोक हैं । कवि ने ऐसे प्रभावोत्पादक एवं हृदयद्रावक ढंग से शंकर का आत्मनिवेदन किया है कि पाषाण हृदय व्यक्तियों का भी चित्त भक्ति भाव से आर्द्र हो जाता है । कवि कहता है :

`भगवन् ` क्या मुझे आप अधम् , पापात्मा और खल समझ कर तो मेरी

---

१ ,२ पृ० २७२ ,७३ संस्कृत साहित्य का इतिहास डा० बल्देव उपाध्याय

उपेक्षा नहीं कर रहे हो ? नहीं नहीं , ऐसा समझना तो आप करुणासागर के लिए उचित नहीं है । क्योंकि शुकु तो मय पुण्यात्मा को आपकी रक्षा की क्या आवश्यकता है ? आपकी अनुकम्पा तो हम सरीखे असाधु , अधम और पापात्माओं पर ही सार्थक हो सकती है । अत: हमलोग भी दया के पात्र हैं ।[१.]

पन्डित राजगन्नाथ

इनके स्तोत्रों में पांच स्तोत्र मुख्य है । इनके नाम निम्नलिखित है ।१। करुणा लहरी । इसमें भगवान की दया की प्रार्थना की गई है । । ।२। गंगालहरीया पीयूषलहरी : गंगा की स्तुति : ।३। अमृत लहरी । यमुना की स्तुति : ।४। लक्ष्मी लहरी : लक्ष्मी जी की स्तुति : ।५। सुधा लहरी :सूर्य स्तुति: इनके स्फुट पद्यों का संग्रह `यामिनी विलास` में किया गया है । भगवान् श्री कृष्ण के प्रति उनके हृदय में अपार भक्ति थी । इसी कारण उनका काव्य भक्ति रस से नितान्त स्निग्ध है । यमुना तट पर गोपियों के साथ विहार करते हुए कृष्ण का बड़ा ही मनोरम रूप उपस्थित किया गया है :

स्मृतापि तरुणा तपं करुणया हरन्ती नृणा
मभंगुरत नुत्विषां वलयिता शतैं विद्युंनाम् ।
कलिन्द गिरि नंदिनी तट सुरद्रुमा लम्बिनी
मदीयमति-चुम्बिनी भवतु कापि कादम्बिनी ।।

---

१. स्वैरेव यद्यपि गतो ऽहमध्य: कुकृत्यै
स्तत्रापि नाथ तव नास्म्य बलेशपात्रम् ।
दृप्त: पशु: पततिय: स्वय मन्धकूपे
नो पेक्षते तमपि कारुणि को हिलोक: ।।१३।३८

उपर्युक्त स्तोत्रों के अतिरिक्त संस्कृत के अन्य ग्रंथों में भी स्तोत्रात्मक छंद हैं। बाण भट्ट के समय में वाराह भगवान् की भी स्तुतियाँ लिखी गई थीं।

उत्तर राम चरित 'रघुवंशम्' 'कुमार सम्भवम्' विक्रमोवर्शीयम् 'वेणी संहार' 'हर्ष चरितम्' 'नैषध चरितम्' जीमूत वाहनोपाख्यानम: 'रामवन गमनम्', 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' आदि ग्रन्थों में भी स्तोत्रात्मक शब्द भरे पड़े हैं। वेणी संहार की सरस्वती वन्दना दृष्टव्य है:

काव्य लाभ सुपाति तव्य सनि नस्ते राजहंसा गता
स्तागो'च्छम: क्रम मागता गुणतय श्लाध्या नवाम: क्षताम्।
सालंकार रस प्रसन्न मधुराकारा: कवीनां गिर:
प्राप्तानान्श भय तुभुमि वलये जी यात्प्रवन्धो महान्॥

कुछ गीत कोटि के भी स्तोत्र संस्कृत में प्राप्त होते हैं जैसे विरह गीतम्, प्रपन्न गीतम्[1]। आधुनिक काल के प्रीतात्मक स्तोत्र इसी परम्परा में रखे जा सकते हैं। कुछ मंगलात्मक स्तोत्र भी प्राप्त होते हैं जैसे राम मंगलम्[2], कृष्ण मंगलम् आदि आधुनिक काल में इस प्रकार के स्तोत्रों में विश्व मंगल की कामना की जाती है। वल्लभाचार्य, मधुसूदन सरस्वती, चैतन्य महाप्रभु आदि के भी सरल स्तोत्र संस्कृत साहित्य में हैं। ऐसे ही अन्य अनेक ग्रंथ भ्रम से गर्त में पड़े हुए हैं जिनका यदि अनुसंधान किया जाय तो उनमें हमारे स्तोत्रों का एक विशाल भंडार प्राप्त हो सकता है। भारतीय आध्यात्मिकता जीवन का समस्त सुख भोग त्यागकर ही स्थिर हुई है। उसकी स्थिरता ही हमें ब्रह्म के सन्निकट पहुँचाने का मार्ग दर्शित करती है।

'संस्कृत-स्तोत्र-साहित्य में रस'

'रस' को काव्य की आत्मा कहा जाता है। जब तक काव्य में साधारणीकरण की की अवस्था नहीं आती तब तक उसका प्रभाव शून्य ही रहता है। संस्कृत साहित्य के स्तोत्रों की दो कोटियाँ निर्धारित की जा सकती हैं।१। लौकिक एवं ।२। पारलौकिक। इसी क्रम से रसों का भी प्रयोग किया गया है। लौकिक

में श्रृंगार , करूण , वीर , वात्सल्य आदि रसों की प्रधानता है जबकि पारलौकिक में 'शान्त ' रस को प्रमुख स्थान दिया गया है । रामायण , महाभारत आदि ऐतिहासिक काव्यों में वीर , करूण , श्रृंगार आदि रस विशेष रूप में प्रयुक्त हुए हैं ।

गोपिकाओं द्वारा कृष्ण के प्रति स्नेह प्रदर्शन श्रृंगार रस में ही हुआ है । यशोदा के द्वारा कृष्ण के प्रति अत्यन्त ही वात्सल्य का प्रदर्शन हुआ है । इसके अनेक ~~उदाह~~ उदाहरण है :

पीत प्रायस्य जननी सातस्य रूचिर स्मितम् ।
मुखं लालयती राजञ्जृम्भतो ददृशे इदम् ।।३५।।[1]

वात्सल्यमयी यशोदा माता अपने पुत्र के मुख में समस्त विश्व को देखकर भयभीत हो गई और उन्हें कम्पन होने लगा:

खं रोदसी ज्योतिर नीक माशा:
सूर्येन्दु वह्निश्वसनाम्बु धींश्च ।
द्वीपान् नगांस्तु दुहितृर्वनानि
भूतानि यानि स्थिर जंग मानि ।।३६।।[2]

कृष्ण-बलराम जब छोटे छोटे पैरों से चलते हैं तो उनके पैरों के घुंघरू अत्यंत ही मधुर ध्वनि करते हैं :

तावङ्घ्रि युग्म मनु कृष्य सरी सृपन्तौ
घोष प्रघोष रूचिरं व्रज कर्द मेषु ।

---

१. श्रीमद् भागवत् दशमस्कंध श्लोक ३५
२. वही वही श्लोक ३६

तन्ना दूहृष्ट मनसा वनु सृत्य लोकं
मुग्ध प्रभीत वदुपेय तुरन्ति मात्रो: ।।२२।।[१.]

जब कृष्ण एवं बलराम पंक समन्वित होकर घर में प्रवेश करते हैं तो वे और भी सुन्दर प्रतीत होते हैं:

तन्मोतरौ निज सुतौ घृणया स्नुवन्त्यौ
पंकांग राग रूचिरा वुप गुह्य दो म्यार्मृं ।
दत्वा स्तनं प्रपिवतो: स्म मुखं निरीक्ष्य
मुग्ध स्मिताल्प दर्शनं ययतु: प्रमोदम् ।।२३।।[२]

संस्कृत-साहित्य की परिलौकिक प्रवृत्ति के कारण उसकी दार्शनिक गरिमा सर्वाधिक है जिसके मूल में शान्त रस का बाहुल्य है । संस्कृत का समस्त स्तोत्र-साहित्य इसी रस से परिपूर्ण हैं । भक्तों ने अपने हृदय की दयनीयता , श्रद्धा , एवं अनुराग का प्रदर्शन करते हुए इष्ट देव के गुणों का गान करने का प्रयत्न किया है । इसके अधिकाधिक उदाहरण समस्त वांङ्मय में उपलब्ध होते हैं । निम्नलिखित में सूर्य कास्तवन् किया गया है :

अथह भगवंस्तव चरण नलिन युगलं त्रिभुवन गुरू
भिर्वन्दित महमपात याम यजु: काम उपसरामीति ।।७२।।[३.]

इस प्रकार संस्कृत-स्तोत्र-साहित्य में शान्त रस की प्रधानता मानी जा सकती है और अन्य रस गौण रूप में प्रयुक्त हुए दिखाई पड़ते हैं । स्तोत्रों में दार्शनिक तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं जिनके कारण उनकी भक्ति-भावना अत्यंत ही उच्चकोटि की कही जाती है ।

जैन-साहित्य में स्तोत्र

जैन धर्म की उत्पत्ति के विषय में डा० चारपेन्टर ने लिखा है

---

१. वही श्लोक २२ | अथाष्टमों अध्याय: । दशमस्कन्ध ।
२. वही श्लोक २३ |
३. वही श्लोक ७२ द्वादश स्कन्ध

" We ought also to remember both that the Jains religion is certainly old than Mahavira, his reputed predicessor Parsva, having almost certainly existed as the real person and that consequently the main point of the original doctrine may have been codified long before Mahavira." १.

अर्थात् हमें दोनों का स्मरण करना है । जैन धर्म महावीर से भी प्राचीन है , उनके प्रसिद्ध जिन पार्श्वनाथ निश्चय रूप में इसके मूल में हैं और यही कारण है कि मुख्य धर्म महावीर के पूर्व अनुमानित हो सकता है । जैन धर्म के अनुयायियों ने तीर्थंकरों के प्रति अपनी भक्ति-भावना प्रदर्शित करने के लिए उनका स्तवन किया है । पार्श्वनाथ , महावीर एवं अन्य तीर्थंकरों के स्तोत्र भक्ति के अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण अंग हैं । श्रीमद् भागवत पुराण के अनुसार जैन धर्म ऋषभ देव के जीवनोपदेश और आदर्श में प्राप्त होते है । उनकी स्तुति करते हुए श्रीमद् भागवत पुराण में उन्हें ~~को~~ कैवल्य मार्ग का शिक्षक बताया गया है :

अपमवतारो रजसोप प्लुत कैवल्योप शिक्षणार्थ: १२
तस्यानु गुणान् श्लोकान् गायन्ति-
अहो भुव: सप्त समुद्र वत्या
दीपेषु वर्षेष्व धि पुण्य मेतत् ।
कर्माणि भद्राण्यवतार वन्ति ।।१३।।

---

१. Charpenter, Uttamdhyayama page 21

अहो नु वंशो यश सावदात:

प्रैय व्रतो यत्र पुमान् पुराण:।

कृतावतार: पुरुष: स आद्य :

चचार धर्मं यदकर्म हेतुम् ॥१४॥

कोन्वस्य काष्ठाम परोऽनुगच्छ-

मनोरथ नाप्य भवस्य योगी ।

यो योगमाया: स्पृहयत्यु दस्ता

ह्य सत्तयेन कृत प्रयत्ना: ॥१५॥ २.

जैन स्तोत्रों की संख्या कम नहीं है । जैन स्तोत्र अधिक मात्रा में है केवल "काव्य माला " के सप्तम गुच्छ में "तेइस" जैन स्तोत्रों का संकलन है जिनमें "मानतुंगाचार्य " का "भक्तामर स्तोत्र " तथा सिद्धसेन दिवाकर का "कल्याण मंदिर स्तोत्र " सुमधुर पदावली एवं सुंदर भाषा के कारण जैनियों में विख्यात है । मानतुंग को बाण एवं मयूर का समकालीन बतलाया जाता है । सिद्धसेन उनसे दो शती पूर्व हुए हैं । यह दोनों "स्तोत्र " भक्ति का मधुरतम रूप एवं उत्तम आदर्श उपस्थित करते हैं । कवि अपनी नम्रता दिखलाता हुआ स्पष्ट करता है कि जिनवर ! अल्प शिक्षित तथा विद्वानों के हास्य का पात्र होने पर भी तुम्हारी भक्ति मुझे सुख प्रदान करती है । वसंत में कोकिल स्वयं नहीं बोलना चाहती प्रत्युत आम्र-मंजरी उसे बलात् कूजन का आमंत्रण देती है :

"अल्प श्रुतं श्रुत वतां परिहास धामत्त्वद भक्ति रेव मुखरी कुरुते बलान्माम् ।

यत् कोकिल: किल मधौ मधुरं विरौति तच्चारु चूत कलिका निकरैक हेतु ॥

कल्याण मंदिर स्तोत्र में केवल ४४ पद्य हैं । परंतु काव्य-दृष्टि से यह नितान्त महत्वपूर्ण है । कवि कहता है "हे जिन । आपकी अलौकिक महिमायुक्त परिचय की बात दूर रहे । आपका नाम ही विश्व कल्याणकारी है । निदाघ के दिनों में सरसिज से युक्त सरोवर की सरस वायु भी तीव्र आतप सन्तप्त बटोहियों की ग्रीष्मता को दूर कर देती है । जलाशय तो तुच्छ वस्तु है :

---

२. श्रीमद्भागवत पंचम स्कंध अध्याय ६ श्लोक १२-१५ पृ० ५६७-५६८

" आस्ताम चिन्त्य महिमा जिन । संस्त वस्ते
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्रातप पो पहत पान्थ जनानिदाघे
प्रीणाति पद्म सरसः सरसो ऽ निलो ऽ पि ।।

श्री वादि राज का "एकी भाव स्तोत्र" सोम प्रभाचार्य की "सूक्ति मुक्तावली" श्री जम्बू गुरु का "जिन शतक" आदि अनेक स्तोत्रों की रचना जैन कवियों ने की है । आचार्य हेम चन्द्र ने भी भगवान् महावीर की स्तुति में प्रौढ दार्शनिक स्तोत्र लिखा है जिसमें ब्राह्मण एवं बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों की आलोचना है । इस स्तोत्र का नाम है "अन्य योग व्यवच्छेदिका द्वात्रिंशिका काव्य"। इसी की टीका मल्लिषेण सूरि ने "स्याद्वाद मञ्जरी" नाम से की है जो मूल ग्रंथ से भी मधुर है :

अम्भादास चरि कृत "उपदेशमाला" एवं "सावयधम्म दोहा" भी प्रसिद्ध हैं । इसमें कवि ने जिन भगवान् से कष्टों को दूर करने की प्रार्थना की है । बिना उनकी सहायता के हृदय का अन्धकार नहीं दूर हो सकता :

" णमकारि पिसु पंचगुरु दुरिदलिय दुल कम्मु ।
दैसेने पय हम्मरहि भक्तमि सावय धम्मु ।।१।।
तेमायहु जिणवर वयणु गुरु उव एसई होइ ।
मेधार हैं विणुदीन ऽ हैं अर्थवी कि पिछेइ कोइ ।।६।।

सोमदेव की "शब्दार्णव चन्द्रिका" में भी बड़ी मधुर उपासना की गई है । महाकृति में भक्त "जिन" को आदि सृष्टि का कर्ता धर्ता एवं अत्यंत ही महत्वशील पुरुष समझता है और उसी आत्मिक शान्ति के लिए उनकी प्रार्थना है : —

ऊँ नमः । श्री मत्सर्वज्ञ वीतराग तन्दचन तदनुसारि गुरूभ्यो नमः ।
देव देवं जिननत्वा सर्वसत्वा मय मुदम् ।
शब्द शास्त्रस्य सूत्राणां महावृत्तिर्वि रूप्यते ।।१।।

शब्दांभोजभास्कर न्यास 'श्री विजयोदया गाथा', 'भावार्थ दीपिका टीका' आदि में स्तोत्र भरे पड़े हैं । पार्श्वनाथ चरित में जैनेंद्र ने बड़ी ही महत्त्वशाली रूप उपस्थित किया है :

'अचिन्त्य महिमः देवः सोऽस्मि वंद्यो हितषिणा ।
शब्दाश्च येन सिद्ध यन्ति साधुत्वं प्रति लम्भिताः ।।१८।।
प्रमाण अकलंकस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।
धन जय कवेः काव्य रत्न त्रयम् पश्चिमम् ।।२०।।
लक्ष्मीरात्यान्ति की यस्य निरवधाऽ वमासते ।
देव वंदित पूजिशं नमस्तस्मै स्वयं भुवे ।।

' हे देव मैं सांसारिक माया जाल में फंसा हूँ । आपकी महिमा जानकर सिद्धि हेतु ही अर्चना करता हूँ । आप मेरे कलंकित जीवन को तो जानते हैं । तीनों प्रकार के दुगुण मुझे घेरे हुए हैं । तेरा गान करने पर लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है । हे देव । आप विश्व वंदनीय हैं । इसलिए मैं आपकी स्तुति करता हूँ।१

इस प्रकार के स्तोत्रों के साथ साथ जैनियों के हिन्दी स्तोत्र भी उपलब्ध होते हैं । अप्रभंश की जटिलता से बचने और बीसवीं शती में जैन धर्म के प्रचार में अधिक सरलता लाने के लिए ही ये स्तोत्र लिखे गये हैं ।

कविवर द्यानतराय जी : आपकी जिन भगवान् के विषय में अनेक स्तुतियां हैं जिनमें आत्मीयता: सरलता एवं विनम्रता का महत्त्वपूर्ण रूप छिपा हुआ है । भक्त शुद्ध हृदय से अपने आराध्य का उपासक है । वह जानता है कि प्रभु ही सब कुछ हैं :

१- पार्श्वनाथ चरित, प्रथम सर्ग

कंचन झारी निरमल नीर पूजौं जिनवर गुन-गंभीर ।
परम गुरू हो जय जयनाथ परम गुरू हो ।
दरश विशुद्धि भावना माय सोलह तीर्थं कर पद पाय ।
परम गुरू हो जय जय नाथ परम गुरू हो ।

ज्ञानपीठ पूजाञ्जलि पृ० २६८

दैत्य कियो उपसर्ग अपार , ध्यान देखि आयो फनिधार ।
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम , नमों मेरुसम पारस स्वाम ।
भव सागरतैं जीव अपार , धरम पोत में धरे निहार ।
डूबत काढे दया विचार , वर्द्धमान वंदौ बहुबार ।।

वही पृ० ३२६

कविवर वृन्दावन जी ..। श्री चन्द्र प्रभजिन पूजा + अपने स्तोत्रों में कवि अत्यंत ही पवित्र भाव से जिन भगवान का आराधन करता है । उनकी क्षणिक कृपा भी आत्मा को शान्ति दे सकती है । तभी तो वह प्रार्थना करता है :

तन-प्रभातनों मंडल सुहात ,
भवि देखत निज भव सात सात ।
मनु दर्पण धुति यह जगमगाय , भवि जनभव मुखदेखत सुआय ।
इत्यादि विभूति अनेक जान ,बाहिज दीसत महिमा महान ।
ताको वरणत नहिं लहत पार ,तो अंतरंग को कहै सार ।।
अनअंत गुणनि जुत करि विहार , धरमोपदेश दे भव्य तार ।
फिर जोग निरोधि अघाति हानं , सम्मेदथ की लिय मुकति-थान
वृन्दावन वंदत शीश नाय , तुम जानत हो मम उर जुभाय ।
ताते काक हौं सुबार बार , मन वांछित कारज सार सार ।।

वही पृ० ३३८

कविवर मनरंग लाल जी ।शीतल नाथ जिन पूजा । अपने स्तोत्रों में कवि सकाम भाव से अपनी मुक्ति की प्रार्थना करता है । सांसारिक माया मोह उसे सब प्रकार से कष्ट देता और केवल जिन ही ऐसे हैं जो उसे मुक्ति एवं शान्ति प्रदान कर सकते हैं :

नितत्तृषा-पीड़ा करत अधिकी दाव अबके पाइयो
शुभ कुंभ कंचन जड़ित गंगा नीर भरिले आइयो ।
तुम नाथ शीतल करो शीतल मोहि भव की तापसों ,
मैं जजों युग पद जोरि करि मोकाज सरसी आपसों ।।

पृ० ३३६

कविवर बखतावर जी । श्री पार्श्व नाथ जिन पूजा । अपने निम्नलिखित स्तोत्र में कवि पार्श्व नाथ जी से मोक्ष की कामना करता है और यही कारण है कि कवि उसकी आराधना को महत्व दे रहा है :

क्षीर सोम के समान अंबु-सार लाइये ,
हेम पात्र धार के सु आपको चढ़ाइये ।
पार्श्व नाथ देव सेव आपकी करूं सदा ,
दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ।।

वही पृ० ३७२

कविवर मल्ल जी । निर्वाण कान्ड । कवि अपने अनेक स्तोत्रों में पूर्व कालिक तीर्थंकरों की निर्वाण के लिए स्तुति करता है :

अष्टापद आदीश्वर स्वामि , वासु पूज्य चंपापुरि नामि ।।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार , बंदो भाव-भगति उर धार ।।
चरमतीर्थंकर चरम शरीर , पावा पुरि स्वामी महावीर ।
शिखर समेद जिनेसुर बीस , भावसहित बंदौ निश-दीस ।।

पृ० ४१०

हेमराज । भक्तामर स्तोत्र । कवि अत्यंत ही निष्कारूप में प्रभु की आराधना कर रहा है । जिन भगवान् ही संसार के रक्षक और कर्ता हैं । तभी तो वह स्तुति करता है :

तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमान तैं ।
तुही जिनेश शंकरो जगत्त्रये विधान तैं ।।
तुही विधात है सही सुमोख पंथ धारतैं ।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ।।
नमों करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो ।
नमोकरूं सुभूरि भूमि लोक के सिंगार हो ।
नमों करूं भवाब्धि-नीर-राशि-शोष-हेतु हो ।
नमो करूं महेश तोहि मोख पंथ देतु हो ।।

पृ० ५१३

कविवर बुध जन जी : कवि जिन भगवान् का दर्शन कर आत्मिक तृप्ति चाहता है । बिना उसकी कृपा के सुख प्राप्ति नहीं हो सकती ।

मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो उदय रवि आतम भयो ।
मो उर हरष ऐसो भयो मनुरंक चिंतामणि लयो ।।
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक वीनऊं तुव चरन जी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन सुनहु तारन तरन जी ।।
जाचूं नहीं सुरवास पुनि नरराज परिजन साथ जी ।
'बुध 'जाच हूं तुम भक्ति भव भव दीजिए शिवनाथ जी ।।

पृ० ५१६

कविवर दौलतराम जी : भगवान् की कृपा से सब प्रकार के कष्ट दूर हो जाते हैं और आत्मा सुख प्राप्त कर लेती है ।

जय वीतराग विज्ञान पूर , जय मोह तिमिर को हरन सूर ।
जय ज्ञान अनंतानंत धार , दृग-सुख-वीरज-मन्डित अपार ।।
जय परम शान्त मुद्रा समेत , भवि-जनको निज अनुभूति हेत ।
भवि-भागनवश जो गेवशाय , तुम धुनि है सुनि विभ्रमनशाय ।।

पृ० ५२०

कविवर भूधर दास जी । शारदा-स्तवन ।

वीर हिमाचल तैं निकरी , गुरू गौतम के मुख कुंड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली , जग की जड़ता तप दूर करी है ।।
ज्ञान पयोनिधि माँहि रली बहुभंग तरंगनिसों उछरी है ।
ता शुचि शारद गंग नदी प्रति , मैं अंजुलि कर शीश धरी है ।।
या जग मंदिर में अनिवार अज्ञान अँधेर छयो अति भारी ।
श्री जिनकी धुनि दीप शिखा सम , जो नहिं होत प्रकाशन हारी ।।
तो किस भाँति पदारथ पाँति , कहाँ लहते रहते अविचारी ।
या विधि संतक हैं धनि हैं , धनि हैं जिन वैन बड़े उपकारी ।।

पृ० ५२३

यद्यपि जैन धर्म की गणना नास्तिक धर्मों में होती है और इसमे ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध क्रान्ति की थी परन्तु भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति के विकास में इस धर्म ने बड़ा योग दिया है ।

बौद्ध साहित्य के स्तोत्र :

छठी शताब्दी ई० पू० की महान धार्मिक क्रान्ति के फल स्वरूप नये नये मतों तथा सम्प्रदायों का उत्थान हुआ था । इनमें से कुछ अस्थायी सिद्ध हुए और कुछ समय के उपरान्त ही विलुप्त हो गए परन्तु कुछ स्थायी सिद्ध हुए और उन्होंने भारतीय धर्म एवं संस्कृति पर अपना अमिट प्रभाव भी डाला । ज्ञाता ने

इन धर्मों का समुचित स्वागत किया और इनके विकास में रत हो गई। कर्म कान्ड एवं आडम्बर के कारण जन समूह एक ऐसा धर्म चाहता था जो उसे नैतिकता के साथ साथ व्यक्तिगत सुखानुभव करा सके। पौराणिक बहुदेववाद से उसे मानसिक शान्ति नहीं मिल पा रही थी और इसीलिए धार्मिक क्रान्ति को जन साधारण में सरलता से स्थान मिल गया। इसने एक ओर यदि पौराणिक भक्ति के अपवादों को दूर करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर अपने विचारों से मानव जीवन में एक विशेष रसानुभूति भी कराई। वर्द्धमान एवं गौतम दोनों ही इस प्रकार के आत्मिक प्रकाश को लेकर आये जिसके अनुसरण मात्र से ही हमारा कल्याण हो सकता था। यद्यपि बौद्ध धर्म का प्रभाव भारत में स्थायी सिद्ध न हुआ किन्तु विदेशों में इसे अच्छी सफलता प्राप्त हुई। बौद्ध धर्म के अनुयायियों ने भी भागवत् धर्म के देवताओं की भाँति बुद्ध के स्तवन् में अनेकों स्तोत्रों का रचना विधान किया है।

बौद्धों के महायान सम्प्रदाय में स्तोत्र पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं। महायान सम्प्रदाय में शुष्क ज्ञान की अपेक्षा भक्ति को अधिक महत्व दिया गया है। भक्ति की प्रधानता होने के कारण महायान सम्प्रदाय के भिक्षुओं ने संस्कृत भाषा में सुंदर स्तोत्रों की रचना की है। शून्यवाद के प्रधान आचार्य नागार्जुन के स्तोत्र प्रचुर संख्या में प्राप्त हुए हैं। उन्होंने चार स्तोत्र लिखे थे जिन्हें 'चतुः स्तव' कहा जाता है। इनके अनुवाद तिब्बती भाषा में भी है। इनके दो स्तोत्र संस्कृत में भी उपलब्ध हुए, जिनमें एक नाम है 'निरौपम्य स्तवः' और दूसरा ~~संकलित है~~ अचिन्त्य स्तव: । ~~इनके दो स्तोत्र संस्कृत में भी~~ जो व्यक्ति शून्य को नितान्त भावात्मक कल्पित करते हैं, उन्हें यह पढ़ कर आश्चर्य होगा कि नागार्जुन के ये स्तोत्र आस्तिकवाद के परम रमणीय उदाहरण हैं। इनपर कालिदास की छायासी प्रतीत होती है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित श्लोक दृष्टव्य हैं :

नामयौना शुचि: काये क्षुतृष्णा सम्भवौनव –
त्वयालौ कानुवृत्यर्थं: दर्शिता लौकिकी क्रिया ।।
नित्यौ ध्रुव: शिव: कायस्त्व धर्ममयौ जिन: ।
विनेय जनहेतौश्च दर्शिता विर्वृति स्त्वया ।।

नागार्जुन के अतिरिक्त अश्वघोष , तारा ,लौकेश्वर अमितातारा आदि ने भी स्तोत्रात्मक साहित्य का सृजन किया है । महायान सम्प्रदायकी यही एक विशेषता रही कि उसने भागवत धर्म की भाँति एक ऐसी भक्ति का रूप उपस्थित किया जैसा कि हम अन्य देवी देवताओं की भक्ति से प्राप्त करते हैं । बुद्ध भी भगवान् के अवतार थे । महायान सम्प्रदाय की सरलता से जन जीवन के अधिक सन्निकट आये लोगों में राम-कृष्ण की भाँति ही उनकी प्रार्थना की भावना जाग्रत हुई और तभी स्तोत्र साहित्य का निर्माण हुआ । यद्यपि बुद्ध ने अपना उपदेश पाली में दिया था परंतु भारतीय कवियों एवं अनुयायियों ने संस्कृत साहित्य में उनकी रचना-विधान किया । तुलसीदास जी ने अपनी विनय पत्रिका में भगवान के चौबीस अवतारों में भगवान् बुद्ध का स्तवन किया है । जैसा कि उन्होंने लिखा है :

प्रबल पाखंड महि मंडलाकुल देखि , निंधकृत अखिल मख कर्म जालं ।
शुद्धबौधैक घन , ज्ञान गुण धाम ,अज बौद्ध अवतार वंदे कृपालं ।।८।।[१]

निष्कर्ष : बौद्धों की भक्ति भावना का प्रभाव भारतीयों के जीवन और संस्कृति पर अधिक मात्रा में पड़ा है । प्रो०श्रीनेत्र पांडेय के अनुसार "बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण ही भागवत धर्म का जन्म हुआ जिसने अहिंसा सिद्धान्त को पूर्णतया अपना लिया । भक्ति सम्प्रदाय का उत्थान बौद्धों के अनीश्वरवाद तथा कर्म काण्डियों के आडम्बरों के कारण हुआ था । बौद्धों के अनीश्वरवाद को चिरकाल तक मानना कठिन था । अतएव भक्ति सम्प्रदाय ने वासुदेव की भक्ति का आन्दोलन आरम्भ किया ।।"[२]

---

१. गोस्वामी तुलसीदास ... विनय पत्रिका पद ५२
२. प्रो० श्री नेत्र पांडेय ... भारत का बृहत इतिहास ..
प्रथम भाग पृ० १३७

नाथ- सिद्ध साहित्य में स्तोत्र

वैदिक कर्म काण्ड के कारण एक प्रबल विद्रोहात्मक भावना का सूत्र पात हो गया था । यद्यपि वैदिक धर्म जटिल था और उसके सिद्धान्त भी सबके योग्य नहीं थे फिर भी वह भारतीय जन जीवन में स्थान प्राप्त करता रहा । भारतीय जनता की अशिक्षा से नाना प्रकार के पंडों एवं पुरोहितों ने सदैव ही लाभ उठाया है और आनंदानुभव किया है । जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म के पश्चात् समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति भी आये जिनकी भक्ति के सिद्धान्त ही दूसरे थे । विचित्र प्रकार की धार्मिक क्रियाओं का आश्रय लेकर यह व्यक्ति जन जागरण करते थे । तंत्र-मंत्र तो इनके नियमित आकर्षण थे और उन्हीं के बल पर इनकी साधना चलती थी । अपने सिद्धान्तों से जन जीवन को प्रभावित कर इन लोगों ने योग की एक भावना ही समाज को दी और समाज ने अशिक्षित होने के कारण उस भावना का हार्दिक स्वागत किया । उनका सम्प्रदाय , नाथ सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुआ जिसमें गुरू को महत्त्व देकर उन्होंने अपनी भक्ति की सक्रियता उपस्थित की । इन्होंने अपनी वाणियों में अपने पूर्व सिद्धों का विस्तार से स्तवन किया है । एक विशेष सम्प्रदाय से सम्बंधित होने के कारण उन्होंने आदिनाथ , मत्स्येन्द्रनाथ आदि का स्तवन करना ही अपनी भक्ति का मूल उद्देश्य समझा था । उन्होंने लिखा है :

नमों नमों निरंजन भरम को विहंडनं ।
नमों गुरूदेव अगम पंथ मेर्व ।।१।।
नमों आदिनाथं गए हैं सुनाथं ।
नमों सिद्ध मछिन्द्र बड़ो जोगिन्द्रं ।।२।।
नमों गोरष सिधं जोग जुगति विधं ।
नमों चरपट रामं , गुरू ग्यान पापं ।।३।।
नमों औघड़ देवं गोरष सबद लेवं ।
नमों बाल नाथं निराकार साथं ।। ८।।
नमों कपिल देवं लह्यो ब्रह्म भेवं ।
नमों सनक सनंदन करमकाल षंडन ।।२५।।[१]

---

१. नाथ सिद्धों की बनियां पृ० ३५ डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ।

निष्कर्ष

इस प्रकार उपर्युक्त परम्परा आगे हिन्दी में मुक्तक एवं प्रबंध काव्यों के सहयोग से विकसित होती गई । आदि काल के रासो एवं प्रशस्ति काव्यों में और भक्ति काल में तुलसी एवं सहज राम के प्रबंधों के अतिरिक्त स्फुट भक्त कवियों में भी इसका धारावाहिक रूप गतिशील होता गया । भक्ति की जो तन्मयता एवं श्रद्धा संस्कृत के स्तोत्रों में निहित थी वह किसी न किसी प्रकार से आगे के स्तोत्रों में भी अपनाई गई है । रीतिकाल में विरुद्-रूपों में यह परम्परा बढ़ती गई और आज आधुनिक काल के प्रबंधों में मंगलाचरण प्रार्थना एवं स्तुति के रूपों में इसका अनुभव किया जा सकता है ।

......